56

ISSN 2349-3887

दोआबा

समय से संगत

चोरी

सुबह-सुबह
बस्ती में
प्रधान के घर
स्वर्ण मुद्राओं की
चोरी का
समाचार फैला

पल भर में
पूरी बस्ती
बंदी
बना ली गई

वर्षों बाद
भेद खुला कि
स्वर्ण मुद्राएं तो
प्रधान ने
खुद ही
चुराई थीं

– जाबिर हुसेन
'आधे चांद का नौहा' से

अप्रैल–जून 2026

दोआबा

समय से संगत

दोआबा

समय से संगत

अप्रैल-जून 2026
वर्ष 20 : अंक 56

***संपादक* : जाबिर हुसेन**
मो.-09431602575

आवरण एवं रेखांकन : अनुप्रिया

मानद सहयोग

लता प्रासर, पवन कुमार, जावेद एक़बाल

प्रबंध

मोनिश हुसेन

कार्यालय : सुनील हेम्ब्रम

संपर्क
247 एम आई जी
लोहियानगर, पटना - 800 020
e-mail : doabapatna@gmail.com
मो.-08207535094

सर्वाधिकार सुरक्षित

पाकीज़ा ऑफसेट
शाहगंज, पटना-800 006
मो.-09334116542

मूल्य : ₹ 150/-

रचनाओं में अभिव्यक्त विचार रचनाकारों के अपने हैं।
संपादक का इन विचारों से सहमत होना ज़रूरी नहीं।

अप्रैल-जून 2026

दोआबा

समय से संगत

अनुक्रम

जाबिर हुसेन : अपनी बात / 05

रचना-समय

हुसम मारूफ़ : ध्वंस में हंसी / 08
(अंग्रेजी से अनुवाद : यादवेन्द्र)
हरियश राय : आप तो ऐसे न थे / 11
राजनारायण बोहरे : ओना मासी धम / 22
भगवती प्रसाद द्विवेदी : जिसके आगे राह नहीं / 34
ऋतु त्यागी : दुख का धागा / 40
सुजाता राज़ी : बुतपरस्त / 46
रेखा शाह आरबी : अफ़सोस / 52
श्यामल बिहारी महतो : हिलटॉप पर लाश / 56
निरुपमा सिंह : खुशी की बौछार / 64

कविता-समय

अमिता पॉल / 72
पल्लवी मुखर्जी / 76
ख़ुदेजा ख़ान / 85
अनिता रश्मि / 89
रजनी शर्मा / 93
यामिनी नयन गुप्ता / 95
प्रणव प्रियदर्शी / 97
मिथिलेश आदित्य / 99
नीरज नीर / 103

संवाद

अवधबिहारी पाठक : मानस जी के मानस की हिलोरे यानि एक डायरी / 106
पढ़ते-पढ़ते, लिखते-लिखते (जयप्रकाश मानस)
शम्भु प्रसाद सिंह : दरकते सामाजिक मूल्यों का दस्तावेज़ 'अंतिम आश्रय' / 109
अंतिम आश्रय (त्रिपुरारी शरण)
अनंत भटनागर : एक संकोची कवि की गंभीर कविताएं / 113
पहाड़ पर बारिशें (गोपाल माथुर)
कुमारी लता प्रासर : जाबिर हुसेन की कथा डायरियों में
स्त्री चेतना की अभिव्यक्ति / 115

दोआबा-55 (जनवरी-मार्च, 2026)

रौशन शर्मा : 'चंदैनी' - एक उद्दात, असह्य और ज़रूरी साहित्यिक वक्तव्य / 119
शहंशाह आलम : कुहासे की मोटी चादर के बीच से निकली धूप है *दोआबा* / 121
निर्देश निधि : सुन्दर और पठनीय अंक / 123
रास बिहारी गौड़ : *दोआबा* पारिवारिक संवेदन की यात्रा / 125
राजेश कुमार मिश्र : पहाड़ों के संकटग्रस्त यथार्थ का सशक्त अभिव्यक्ति / 125

□□

जाबिर हुसेन

फिरंगी नल मत लगवाय दियो

अनुपम जी की बीमारी की ख़बर उनके करीबी दोस्तों और सहयोगियों से लगातार मिल रही थी। इधर उनकी बीमारी के अचानक गंभीर रूप लेने की ख़बर आई, तो दिल जैसे गहरे कुहासे से घिरने लगा। फिर भी यह उम्मीद तो बनी ही रही कि अंतिम समय तक प्रकृति अवश्य कोई चमत्कार दिखाएगी, और वो ठीक होते जाएंगे। लेकिन जो शख़्स दशकों प्रकृति की नैसर्गिकता बनाए रखने की लड़ाई लड़ता रहा हो, अंत में वही प्रकृति उसका साथ नहीं दे सकी। आहत मन से प्रकृति उसे 'विदा' कहने को तैयार हो गई।

सबसे पहली ख़बर सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही ने सुबह तड़के फ़ेसबुक पर दी। मैंने बरामदे की खिड़कियों से बाहर गमलों में उगे पौधों की तरफ़ देखा। पेड़-पौधों पर एक घना कुहासा छाया दिखा। पत्तियां पानी की बेशुमार बूंदों से ढंकी नज़र आईं। ज़मीन की नमी माहौल को ग़मगीन बनाती महसूस हुई।

मैंने याद करने की कोशिश की, मेरी पहली मुलाक़ात अनुपम मिश्र से कब हुई थी। 'बिहार आंदोलन' के दौरान, मई 1974 में, मुंगेर में, सत्ताधारी नेताओं-मंत्रियों ने आंदोलन के खिलाफ़ असामाजिक तत्वों की पहरेदारी में एक जुलूस आयोजित किया था। जुलूस का मक़सद जनता को आतंकित करना था। जुलूस आरंभ से ही बेहद आक्रामक था। कई नामी अपराधी पहलवान विभिन्न शहरों से ट्रकों में भर-भर कर लाए गए थे। मुंगेर शहरवासियों, ख़ासकर युवाओं के दिल-दिमाग़ आक्रोश और क्षोभ से भर गए थे। उन्होंने संगठित रूप से इस अपराधी गठजोड़ का मुकाबला करने की सोची और हज़ारों की तायदाद में खाली हाथ सड़कों पर उतर आए। अपराधी गिरोह जनता की संगठित ताक़त के आगे नहीं टिक पाए। एक पहलवान अपनी जान बचाने को मुख्य सड़क से जुड़ी गली के एक दो-मंज़िला मकान की सीढ़ियां चढ़कर ऊपर बालकनी तक आ गया। घर में उस समय सिर्फ़ औरतें थीं। औरतों ने उसे उठाकर नीचे सड़क पर फेंक दिया। बाद में, उसकी मौत हो गई। सरकार ने घटना को हिंसक कार्रवाई बताते हुए इसे आंदोलन को बदनाम करने का ज़रिया बनाया। घटना के विरोध में एक मंत्री सर्किट हाउस में उपवास पर बैठ गए।

जेपी अपने इलाज के सिलसिले में वेलोर में थे। उन्हें घटना की जानकारी मिली। उन्होंने अपने सहयोगी नारायण भाई देसाई को मुंगेर भेजा। अनुपम जी और श्रवण कुमार गर्ग उनके साथ थे। फोर्ट एरिया के अपने छोटे-से घर में मेरी पहली मुलाक़ात अनुपम जी से हुई। हम साथ-साथ सर्किट

हाउस गए। नारायण भाई ने उपवास पर बैठे मंत्री जी को जेपी का संदेश दिया, और उपवास समाप्त करने का आग्रह किया। जेपी के संदेश का सम्मान करते हुए उन्होंने अपना उपवास तोड़ दिया। अनुपम जी ने एक पत्रिका के लिए पूरे घटनाक्रम पर एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार की।

आपातकाल के दौरान, वाराणसी से चंडीगढ़ जाते हुए हम (अमरनाथ भाई और मैं) थोड़े समय के लिए दिल्ली में रुके। वहीं श्रद्धेय भवानी प्रसाद मिश्र जी से हमारी भेंट हुई। वो अस्वस्थ चल रहे थे। बिस्तर पर लेटे-लेटे हमसे बातें करते रहे। हमारे आग्रह पर, आशीर्वाद स्वरूप, उन्होंने कुछ ताज़ा कविताएं सुनाईं। हमें महसूस हुआ जैसे ये कविताएं अभी-अभी कही गई हों। तब से जो रिश्ता अनुपम जी के साथ बना, वो उनकी आख़िरी सांसों तक बना रहा।

'गांधी मार्ग' के अंक उनके सामाजिक सरोकारों और प्रतिबद्धता के जीवंत प्रमाण हैं। वो 'साक्ष्य' और 'दोआबा' के 'नदियों की आग', 'धरती का ताप' और 'बंजारा' जैसे विशेषांकों को गहरी आत्मीयता के साथ याद रखते थे। मेरी एक कहानी 'इल्तिजा' उन्होंने बड़ी ख़ूबसूरती के साथ 'गांधी मार्ग' में छापी थी।

एक बार, विधान परिषद् के सदस्यों और पत्रकार मित्रों के बीच वितरित करने के लिए मैंने उनकी पुस्तक 'आज भी खरे हैं तालाब' की प्रतियां मंगवाईं। उन्हें आश्चर्य हुआ। कहने लगे, दो-चार लोग भी इसे पढ़ने का समय निकाल सकें, तो बड़ी बात होगी।

अपनी इसी किताब में, एक जगह, उन्होंने लिखा था - 'दिल्ली तालाबों की दुर्दशा की नई राजधानी बन चली थी। अंग्रेज़ों के आने के पहले तक यहां 350 तालाब थे। इन्हें भी राजस्व के लाभ-हानि की तराज़ू पर तौला गया और कमाई न दे पाने वाले तालाब तराजू के पलड़े से बाहर फेंक दिए गए।

उसी दौर में दिल्ली में पानी के नल लगने लगे थे। इसके विरोध की एक हल्की-सी सुरीली आवाज़ सन् 1900 के आसपास विवाहों के अवसर पर गाई जाने वाली 'गारियों', विवाह-गीतों में दिखी थी। बारात जब पंगत में बैठती तो स्त्रियां 'फिरंगी नल मत लगवाय दियो' गीत गातीं। लेकिन नल लगते गए और जगह-जगह बने तालाब, कुएं और बावड़ियों के बदले अंग्रेज़ द्वारा नियंत्रित 'वाटर वर्क्स' से पानी आने लगा।'

फिरंगियों ने दिल्ली की महिलाओं की फरियाद नहीं सुनी। पानी के नल का विस्तार अपनी गति से होता गया। अब उम्मीद स्वराज पर टिकी। फिरंगियों ने उनकी गुहार नहीं सुनी, तो वो दिल मसोस कर रह गईं। उन्हें क्या पता था कि फिरंगियों के पलायन के बाद जो सरकारें आएंगी वो न सिर्फ पूरी राजधानी में नलों के जाल बिछा देंगी, बल्कि उन्हें बोतलों में बंद पानी पीने को भी मजबूर कर देंगी।

अनुपम जी सीने में अपनी पीड़ाएं संभाले हमारे बीच से चले गए। समाज को अपनी पीड़ा का एहसास तक नहीं होने दिया। किसी को दुखी होते देखना उनके स्वभाव से बाहर की बात थी। वो सादगी और सरलता की एक अलौकिक मिसाल थे। उन जैसा कोई अन्य प्राणी इस धरती पर कभी आएगा, ऐसी उम्मीद नहीं!

ग़ाज़ा में उठती यह हंसी एक तरह का आंतरिक संवाद है जो यह तस्दीक करने के लिए है कि हम अभी मरे नहीं, जिंदा हैं। यह भयंकर अभाव और वंचना के बीच पैदा हुई आत्म विवेचन की एक नई शैली है - जहां जीवन तक किसी टिमटिमाते दिए सरीखा दुर्लभ है। यह हंसी मिजाज़ से पूरी तरह एब्सर्ड, अराजक और आदिम है जिसका खुशी या क्षेम से कुछ लेना देना नहीं है। यह मौत के खिलाफ़ प्रतिक्रिया है, बिल्कुल वैसे ही जैसे कोमा में चला गया इंसान सांस लेते हुए यह संदेश देने की कोशिश करता है कि मैं अभी मरा नहीं हूं।

हंसी किसी इंसान को मौत से बचा नहीं सकती ... हां इतना जरूर करती है कि मौत को सामने जाकर चिढ़ा देती है, उसका मुंह थोड़ा कसैला कर देती है।

ग़ाज़ा में जब रूहें हंसती हैं तो उसके पीछे वजह यह बिल्कुल नहीं होती कि कहीं कोई उम्मीद या भरोसा हो ... या कि लंबी सुरंग के अंत में कोई रोशनी टिमटिमा रही हो। दरअसल यह लंबे अंतहीन रास्तों का मखौल उड़ाती है - क्योंकि यहां ग़ाज़ा में कोई भी रास्ता ऐसा नहीं है जिसके चारो ओर से मौतों का पहरा न हो।

- हुसम मारूफ़

रचना-समय